CHETANA
International Journal of Education

Impact Factor
SJIF=5.689

Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN-Print-2231-3613
Online-2455-8729

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

Received on 10th Nov. 2020, Revised on 17th Nov. 2020, Accepted 19th Nov. 2020

आलेख

हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना

* श्रीमती रेखा कुमारी
सहायक प्रोफेसर (हिन्दी)
हितकारी सहकारी महिला शिक्षा महाविद्यालय आरामपुरा कोटा (राज़)
Email- rk2847108@gmail.com, Mob.- 6376625611

मुख्य शब्द : *कोरोना, तकलीफ, मधुमेह, थकान, लाकडाउन, मजदूर, भूखमरी आदि.*

सारांश

हम इतना ही कहना चाहते हैं कि नारी चेतना तो हो, किन्तु मर्यादा के साथ नारी को उसके अधिकारों के साथ–साथ दायित्वों का भी बोध होना आवश्यक है अन्यथा यह पुरुषप्रधान समाज नारी के चेतनाशील किरदार को ज्यादा समय तक सहन नही करेगा या हो सकता है कि नारी चेतना के कारण महिलाओं में एक इगोकॉप्लेक्स आ सकता है। आज की महिला अपने मानसिक पक्ष को बनाये रखने के लिए भावनात्मक पक्ष को भी गति दे चुकी है। कहा जाता है कि रोटी , किताब , और स्त्री जीवन के ये तीन अनमोन रत्न है, वो ऐसे कि रोटी हमें जीवन देती है, किताबें पीढ़ियो को जोड़ती है, और महिलाएं जीवन सूत्र को जोड़ती है और जीवन सूत्र को बाँधकर रखने में अहम भूमिका निभाती है। इनमें से किसी एक के बिना भी जिन्दगी बड़ी बेईमान हो जाती है।

प्रस्तावना

भारतीय नारी का समीकरण ही परिवार से बनता है और खत्म होता है। नारी के कई रूप होते है जैसे माँ, बेटी, बहन, दादी, नानी, सखी, गृहिणी, कामकाजी आदि। पर आज के युग में कामकाजी महिलाओं का दौर अधिक है। चाहे शिक्षा के क्षेत्र में हो या फिर घरेलु कामों में। भले ही आज देश पुरुष प्रधान कहलाने के साथ–साथ महिला को भी प्राथमिकता दी जा रही है। पर वह मिसाल भी अधूरी है क्योंकि उसे बाहरी रूप से आजादी दी गई है। लेकिन भीतर से वह आज भी उन्हीं रुढ़ियों, परम्पराओं, मान्यताओं का अनुसरण कर रही है। नारी की महिमा का गुणगान करते हुए प्रसाद कवि कहते है–

"नारी! तुम केवल श्रद्धा हो। विश्वास रजत नग पग तल में

पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।"

इन्हीं प्रश्नो के जवाब खोजते –खोजते आज वह अपना वजूद खोती जा रही है। वह सोचती है कि क्या नारी का अपना कोई जीवन नहीं है। पर फिर भी आज वह अपने हृदय में एक आशा जगाए बैठी है कि कोई तो उसे समझेगा कि वह भी एक इन्सान है। उसके भी भीतर ओरों की तरह कुछ महत्त्वकांक्षाए है। जिन्हें वह पाना चाहती है। लेकिन मनुष्य जाति में पुरुष का वर्चस्व इतना बढ़ गया कि वह नारी को या तो अपना भोग बनाना चाहता है या फिर उसे अपने रास्ते का काँटा समझता है। अब धीरे धीरे नारी की सोच बदलने

लगी है क्योंकि वह भी अब आगे बढ़ रही है चाहे शिक्षा का क्षेत्र हो ,या डाक्टरी का हो, इंजिनियरिंग का हो या कोई भी छोटा –मोटा उद्योग ही क्यों न हो। तनाव एवम संघर्ष को झेलते – झेलते आज नारी की मनोस्थिति में धीरे – धीरे कुछ न कुछ परिवर्तन दिखाई देने लगे है। नारी की सोच बदलने से ही समस्त नारी जाति का विकास हुआ है।

पिछले कई सालों से नारी की भूमिका में काफी अंतर आया हैं। मध्य वर्ग की नारी की भूमिका घरेलू कार्यों से जुड़ी रहती थी, जैसे बच्चों की देखभाल करना ज्यादातर औरतें पैसे कमाने नहीं जाती थीं। गरीब नारियों को खासकर पैसों की कमी की वजह से काम करना पड़ता था। हांलाकि औरतों को दिया जाने वाला काम हमेशा मर्दों को दिया जाना वाले काम व प्रतिष्ठा और पैसे दोनों छोटे होते थे। भारत के बड़े शहरों में दृष्टि डाले तो हर क्षेत्र में नारी आगे बढ़ रही है। भारत के बड़ें शहरों में दृष्टि डाले तो हर क्षेत्र में नारी आगे बढ़ रही हैं। चाहें वह विश्वविद्यालय की छात्रा हो या डॉक्टर, वकील जैसे पेशे से जुड़ी नारियाँ या फिर हरतरह के काम में नौकरी करने वाली, भारत में समान कार्य के बाद भी नारियों को पगार भी कम मिलती है। उन्हें काम करने के मौके भी कम मिलते हैं।

चेतना शब्द की उत्पत्ति

नालंदा शब्द सागर के अनुसार ' चेतना ' का अर्थ– बुद्धि, ज्ञान , मनोवृति , सूझ – बूझ ,सुधि, समझ, होश आदि। लैटिन भाषा में चेतना का अर्थ ' कांश्सनेंस ' होता है, जो मस्तिष्क की जाग्रतावस्था, किसी वस्तु के विषय में ज्ञान, जानकारी अथवा विचारों को प्रकट करता है।

अर्थ

चेतस, तर्क, शक्ति, ज्ञान संवेदना, बोध आदि।

चेतना शब्द की परिभाषा

1. भारतीय दार्शनिकों के अनुसार ''चेतना वह तत्त्व है, जिसमें ज्ञान की , भाव और व्यक्ति की क्रियाशीलता की अनुभूति है जब हम किसी पदार्थ को जानते है, तो उसके स्वरूप का ज्ञान हमें होता है।''
2. ''चेतना जीवधारियों में रहने वाला वह तत्त्व है जो उन्हें निर्जीव पदार्थो से भिन्न बनाता है। अर्थात चेतना स्वयं को आस–पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।''
3. अरविंद कुमार, कुसुम कुमार के समांतर कोश के अनुसार चेतना का अर्थ एहसास, ज्ञान, बोध, मनोनुभूति, विबोध, वेदना, संज्ञा, संज्ञान, सहानुभूति, जागृति, आपा, इत्यादि है।
4. नारी चेतना से अभिप्राय नारी के अपने अस्तित्व बोध से है। समाज की एक इकाई के रूप में अपने होने के एहसास से ही अस्तित्व की पहचान होती है, किन्तु नारी अस्मिता, उसकी चेतना का प्रश्न केवल अपने होने, अपनी शक्ति और क्षमता की पहचान करने मात्र से नहीं जुड़ा है। नारी को तो अपने व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया में, अपना आपा पाने के लिए, पुरातन स्थापित मिथकों से हर पल जूझना पड़ा है। मिथ ऐसी मिथ्या कल्पनाओं या वस्तु–स्थितियों का जाल होता है, जिनमें स्थापित मूल्यों पर आस्था रखने वाली नारी सहज ही गिरफ्त में आ जाती है। नारी के लिए वास्तविक अनुभव के स्थान पर एक आदर्श स्थापित कर दिया जाता है और इस आदर्श के मिथ में वह जाने के लिए अभिशप्त रहती है।

नारी जीवन के विभिन्न क्षेत्र चेतना से व्याप्त है। सामाजिक चेतना, आर्थिक चेतना, राजनीतिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना, नैतिक चेतना, मनोवैज्ञानिक चेतना, सौंदर्यगत चेतना आदि चेतना के कई रूप है। नारी चेतना में प्रत्येक प्रश्न के केन्द्र में नारी को ही लिया जाता है। भारतीय समाज में नारी की स्थिति युगीन आदर्शो और जीवन मूल्यों के साथ–साथ बदलती रहती है। इस बदलाव के कारण ही नारी जीवन सदैव ही त्रासदियों, दुःखो एवं पीड़ाओं से भरा रहा है।

प्रेमचन्द से लेकर आज के आधुनिक युग तक हिन्दी कथा साहित्य में विभिन्न प्रकार से नारी की भावना का चित्रण किया गया है। यहाँ नारी को सभ्यता, संस्कृति, बोली, तीज–त्योहार, परम्पराऐं, रीति–रिवाज पारस्परिक सम्बध मनोरंजन, जीवन सम्बधी दृष्टिकोण,

राजनीतिक चेतना , रहन–सहन, लोकगीत, नृत्य, लोकभाषा, लोकोक्ति, मुहावरे आदि के कटघरे में डालकर उसकी अस्मिता को उकेरा है।

प्रेमचन्द द्वारा रचित ''**बड़े घर की बेटी**'' कहानी में आनंदी नाम की नारी आदर्श की भूमिका का निर्वहन कर प्रेमचन्द का एक गरिमामयी पात्र बनी, जो स्वयं के कारण ही उत्पन्न दो भाइयों के मध्य झगड़े को अन्त में आनन्दी स्वयं की करूणा एवं सूझ बूझ के बल पर ही समाप्त कर घर की एकता को पुनः स्थापित करती है और सबसे प्रशंसा प्राप्त करती है। '' गौरीपुर गांव के जमींदार है, बेनीमाधव। उनके दो पुत्र है – श्रीकंठ और लालबिहारी। उनके बड़े पुत्र की पत्नी है आनंदी, जिसकी बेनीमाधव के छोटे पुत्र यानि आनंदी के देवर लालबिहारी से कुछ कहासुनी हो जाती हैं। क्रोध में लालबिहारी आनंदी पर अपने खड़ाऊ से प्रहार कर देते है और फिर क्या है यह बात परिवार में क्लेश और झगड़े का रूप ले लेती है। प्रेमचंद ने इस कहानी (बड़े घर की बेटी) में एक आर्दश की स्थापना की है कि कैसे आनंदी अपना क्रोध भूलकर परिवार में आपसी सौहार्द और सहनशीलता से टूटते परिवार को बचाया है।''

प्रेमचन्द द्वारा रचित '' **सौत** '' कहानी में रामू अपनी पत्नी रजिया के साथ अच्छा बर्ताव न कर घर से जाने के लिए बेबस कर देता है, क्योंकि अब वह पहले जैसी सुन्दर नही है। वह तो अपनी दूसरी पत्नी दसिया से प्रेम करता है। रामू के मर जाने पर रजिया, सौतन दसिया और उसके के बेटे जोखू को अपनाकर जीवन भर उनका भार उठाने के लिए तत्पर हो जाती है। रजिया को साड़ी की उतनी चाह न थी, जितनी रामू और दसिया के आनन्द में विघ्न डालने की! वह बोली रूपये नही थें तो कल अपनी चहेती के लिए चुंदरी क्यों लाए, चुंदरी के बदले उसी दाम में दो साड़ियाँ ही ले आते तो एक मेरे काम न आ जाती? रामू ने स्वेच्छा भाव से कहा मेरी इच्छा जो चाहूंगा करूंगा तू बोलने वाली कौन है? कहानी के अन्त में क्या होता है कि रामू मर जाता है। तब रजिया ने कहा – वे नहीं है, तो मैं तो हूँ। वे जितना करते थे, मैं उसका दूगा करूंगी। **जब मैं मर जाऊँ, तब कहना जोखूँ का बाप नहीं है!**

विश्वम्भरनाथ शर्मा ने ''**ताई**'' कहानी में पारिवारिक सम्बधों की विसंगतियों को उजागर करती हुई यह चित्रित करती है कि मानसिक संकीर्णता से उत्पन्न ईर्ष्या द्वेष बच्चों के स्नेहमयी सूत्रों से किस प्रकार दूर हो जाता है। छोटे भाई के बच्चे मनोहर के निश्छल प्यार से रामेश्वरी का चरित्र एक उदात्त महिला के रूप में पाठक के समक्ष उभरता है। रामेश्वरी कुछ उत्तेजित स्वर में बोली – ''बातें बनाना बहुत आसान है। तुम्हारा भतीजा है, तुम चाहो जो समझो, पर मुझे पता नही ये सब बातें अच्छी नही लगतीं। हमारे तो भाग ही फूटे हैं, नही तो यह दिन नही देखना पड़ता। तुम्हारा चलन तो दुनिया से निराला है। आदमी संतान के लिए न जाने क्या – क्या करते है पूजा करते है, व्रत रखते है, पर तुम्हें इन बातों से क्या काम ? तुम हो कि रातभर अपने भतीजों में मग्न रहते हो। तब बाबूसाहब ने अपनी स्त्री की ओर करवट लेकर कहा '' आज तुमने मनोहर को बुरी तरह ढकेला था, मुझे अब तक उसका दुःख है।''

जयशंकर प्रसाद ने '**पुरस्कार**' कहानी के माध्यम से मधूलिका को एक निस्वार्थी स्त्री बताया है, जिसके लिए देश ही सर्वोपरि है। देश के ऊपर स्वयं के प्रेम को बलिदान करने की इस अमर कथा ने भाव और संवेनाओं की ऐसी तरंगे उठती है, जो निरंतर पाठक के हृदय को उद्वेलित करने में सक्षम है। राजा ने सेनापति से कहा सैनिकों को एकत्र करके तुम चलो मैं अभी आता हूँ। सेनापति के चले जाने पर राजा ने कहा तुमने एक बार फिर से कोशल का उपकार किया। यह सूचना देकर तुमने पुरस्कार का काम किया है। अच्छा, तो तुम यहीं ठहरो। पहले उन आतताइयों का प्रबन्ध कर लूँ। अपने साहसिक अभियान में अरुण बन्दी हुआ और दुर्ग उल्का के आलोक में अतिरंजित हो गया। भीड़ ने जयघोष किया, क्योंकि सबके मन में उल्लास था। राजा ने सहमत होकर आज्ञा दी –' प्राणदण्ड'। मधूलिका बुलायी गई। वह पगली – सी आकर खड़ी हो गई। कोशल नरेश ने पूछा –मधूलिका, तूझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग। वह चुप रही। राजा ने कहा– मेरी निज की जितनी खेती है, मैं सब तूझे देता हूँ। मधूलिका ने एक बार बन्दी अरुण की ओर देखा और कहा महाराज, मुझे कुछ नही चाहिए। अरुण हँस पड़ा। तो राजा ने कहा नहीं, मैं तूझे अवश्य दूंगा। माँग ले। तो मूझे प्राणदण्ड मिले। कहती हुई वह बन्दी अरुण के पास जा खड़ी हुई। स्त्री पर मनु की यह पंक्ति अक्सर उदाहणार्थ प्रस्तुत करती है–

यत्र नार्यस्तु पूज्यंते ,तत्र रमन्ते देवता।

यत्रैतास्तु न पूज्यंते ,र्स्वास्त जाफलाः किया।

प्रसाद ने नारी को न केवल पुरुष के समतुल्य माना है, वरन् उसे पुरुष की अपेक्षा और अधिक ऊर्जावान, प्रकृतिस्वरूपा एवं शक्तिस्वरूपा के रूप में चित्रित किया है। जहाँ एक ओर उनके नारी प्रधान कहानियों एवं नाटकों में नारी को पुरुष से कहीं श्रेष्ठतर रूप में चित्रित किया गया है, वहीं 'कामायनी' जैसे श्रेष्ठ महाकाव्य में नारी को हृदय और बुद्धि का प्रतीक माना है। यही कारण है श्रद्धा और इड़ा के समकक्ष मनु का चरित्र बौना दिखाई देता है। प्रसाद की नारी विषयक दृष्टि नारी जाति को महान गौरव प्रदान करती है। इसीलिए वे उसे जीवनदायिनी एवं पुरुष के जीवन में अमृत स्वरूपा मानते हैं।। इस दृष्टि से प्रसाद ने अपने कहानी में नारी के उज्ज्वल पक्ष को विशेष रूप से अभिव्यक्ति प्रदान की है।

प्रसाद की कहानियों में नारी के छवि सौंदर्य चित्रों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि प्रसाद ने नारी सौंदर्य का गहन अध्ययन ही नहीं किया वरन् उसकी अनुभूति भी की है। प्रसाद जी ही सुशुप्तावस्था में भी नारी के सौंदर्य को जागृत रख सकते है। चरित्रों के गठन में वे पुरुष–चरित्रों की अपेक्षा अधिक सफल हुए हैं। इन स्त्री पात्राओं में हृदय की प्रधानता है। स्त्रियाँ करुणा की मूर्ति है।। स्त्रियों के राज्य की सीमा विस्तृत और पुरुष की सीमा संकुचित है। प्रसाद की नारी अगर प्रेमी को ग्रहण करना जानती है तो उनके स्वार्थ और निम्न भावनाओं का आभास पाकर उनको छोड़ देने की शक्ति भी रखती है। इस प्रकार उन्होंने महिमामयी, त्यागशीलता आर्य ललनाओं का चित्र ही अधिक अंकित किया है। उग्र स्वभाव वाली क्रूर छलनामयी नारी का चित्र अपेक्षाकृत कम है। नारी के हृदय में वेदना का अपार सागर हैं। वह अपने आसुँओ को घोट घोट कर पी रही है।

आज की महिला अपने मानसिक पक्ष को बनाये रखने के लिए भावनात्मक पक्ष को भी गति दे चुकी है। कहा जाता है कि रोटी, किताब, और स्त्री जीवन के ये तीन अनमोन रत्न है, वो ऐसे कि रोटी हमें जीवन देती है, किताबें पीढ़ियो को जोड़ती है, और महिलाएं जीवन सूत्र को जोड़ती है और जीवन सूत्र को बाँधकर रखने में अहम भूमिका निभाती है। इनमें से किसी एक के बिना भी जिन्दगी बड़ी बेईमान हो जाती है'।

फणीश्वरनाथ रेणु जी ''**आत्मा के शिल्पी** ''ने संवदिया कहानी के माध्यम से बड़ी बहुरिया की मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्त करते हुए गाँव , अंचल की दुखयारी, विपन्न, बेसहारा नारी का चित्रण किया है। आदमी हमेशा से नारी की स्वतंत्र सत्ता से डरता रहा है और उसे ही उसने बकायदा अपने आक्रमणों का केन्द्र बनाया है। हरगोबिन ने देखी है द्रोपदी चीरहरण लीला। बनारसी साड़ी के तीन टुकड़े करके बँटवारा किया। निर्दयी भाईयों ने बेचारी बड़ी बहुरिया। **" और कितना कड़ा दिल करुँ ? माँ से कहना, मैं भाई – भाभियों की नौकरी करके पेट पाल लूँगी, बच्चों के झूठन खाकर एक कोने में पड़ी रहूँगी। हरगोबिन भाई ! माँ से कहना, भगवान ने आँखे फेर ली है,** लेकिन मेरी माँ तो है, कहना माँ मुझे यहाँ से नही ले जाएगी तो मैं किसी दिन गले में घड़ा बाँधकर पोखरे में डूब मरुंगी, बथुआ साग खाकर कब तक जीउँ। किसलिए, किसके लिए? एक नौकर था वह भी भाग गया। गाय खूँटें में बँधी भूखी प्यासी हिकर रही है। मैं किसके लिए इतना दुःख झेलूँ। ''

हरगोबिन :– देवर – देवरानियाँ भी कितने बेदर्द हैं, ठीक अगहनी धान के समय बाल बच्चों को लेकर शहर से आएँगें। दस पन्द्रह दिनों में कर्ज उधार की ढेरी लगाकर, वापस जाते समय दो–दो मन के हिसाब से चावल चूड़ाँ ले जाएँगें। फिर आम के मौसम में आकर हाजिर। कच्चा आम तोड़कर बोरियों में बंद करके ले जाएँगें। फिर उलटकर कभी नहीं देखते, राक्षस है सब। कर्ज उधार अब कोई देते नहीं, एक पेट तो कुत्ता भी पालता हैं लेकिन मैं ? माँ से कहना——?

कहानीकारों की कहानियों में पति–पत्नी के संबंधों के मध्य आयी दरार को भी प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। कहानीकार का मानना है कि आज के भौतिकतावादी युग में अत्यधिक निर्धनता और तंगहाली पति–पत्नी के बीच अविश्वास पैदा कर आपसी रिश्तों में दरार उत्पन्न कर देती है। निर्धनता की विभीषिका इस कदर दाम्पत्य जीवन पर प्रभावित होती है कि वह अपने भीतर जीवन के छोटे–छोटे सुखों को भी समेट लेती है। निश्कर्शतः कहा जा सकता है कि उपेन्द्रनाथ अश्क की कहानियों में मनोवैज्ञानिक नारी चेतना और अन्तर्जगत के अन्तर्गत प्रेम, संघर्ष, अन्तर्द्वन्द, जिजीविशा, अन्य संबंध आदि का प्रभावशाली चित्रण देखने को मिलता है। अपनी अखण्डता और संपूर्णता में नारी दुर्जेय और अजेय है । वह एक ऐसी शक्ति है, जो स्वतंत्र और स्वच्छंद है, इसलिए आदमी ने ही उसे तोड़ा है। इसके अन्तर्गत घोषा, लोपामुद्रा, और अपाला आदि विदुषियों ने ऋगवेद के मंत्रों की रचना की थी। गार्गी ने याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ किया था।

यशपाल ने अपनी कहानियों में समाज की समसामयिक समस्याओं की गहराई में उतरकर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उसकी नब्ज टटोलते हुए नारी के जीवन से जुड़ी समस्याओं का उजागर किया है। उन्होंने नारी जीवन में होने वाले उतार चढ़ाव को '' **परदा** '' कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है–

''इस दृश्य को देख सकने की ताब चौधरी में न थी, परन्तु द्वार पर खड़ी भीड़ ने देखा– घर की लड़कियाँ और औरतें परदे के दूसरी ओर घटती घटना के आंतक से आँगन के बीचों–बीच इकट्ठी हो खड़ी काँप रही थी। सहसा परदा हट जाने से औरतें ऐसे सिकुड़ गयीं, जैसे उनके शरीर का वस्त्र खींच लिया गया हो। वह परदा ही घर – भर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। उनके शरीर पर बचे चिथड़े उनके एक–तिहाई अंग को ढकने में भी असमर्थ थे। जाहिल भीड़ ने घृणा से आँखे फेर ली। उस नग्नता की झलक से खान की कठोरता भी पिघल गयी। ग्लानि से थूक, परदे को आंगन में वापिस फेंक, कुद्ध निराशा में उसने '' लाहौल बिला.... !'' कहा और असफल लौट गया। भय से चीखकर ओंट में हो जाने के लिए भागती हुई औरतों पर दया कर भीड़ छट गयी। चौधरी बेसुध पड़े थे। जब उन्हें होश आया, ड्योढ़ी का परदा आंगन में सामने पड़ा था, परन्तु उसे उठाकर फिर से लटका देने का सामर्थ्य उनमें शेष न था। शायद अब इसकी आवश्यकता भी न रही थी। परदा जिस भावना का अवलम्ब था, वह मर चुकी थी।''

इसी प्रकार 'शुभ चिंता' नामक कहानी में सीता के अन्तर्जगत को प्रभावित करने वाले अन्तर्द्वन्द्व को **अमरकांत** ने अन्तर्द्वन्द्व को मार्मिक ढ़ंग से प्रस्तुत किया है – और जानती हो मंजु, मैं जल्दी एक आशा और उमंग में बहने लगी। यह सब कैसे हो गया ,मैं ऊचाँ उठ सकती हुँ। इस कल्पना से मुझे लगा कि मैं दूसरों को प्रभावित कर सकती हूँ। इस ख्याल ने मुझको पागल बना दिया तुम हँसोंगी। मुझे अपना शरीर अपनी शक्ल अपनी चाल – ढ़ाल सब कुछ अच्छा लगने लगा। फिर मैं बहुत डर गई और मेरे दिल में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि मैं जीवन भर शादी नहीं करूँगी। मेरे अन्दर गंभीर उथल–पुथल मची थी। मैं अपने से लड़ती रही। ऐसा लगता था, मुझको अपने आदर्श और उत्साह क अलावा कुछ नहीं चाहिए।

इसी तरह '**दोपहर का भोजन**' नामक कहानी की नायिका सिद्धेश्वरी एक कुशल माँ और पत्नी के रूप में चित्रित हुई है–

इसी प्रकार सिद्धेश्वरी अपने परिवार में से तनाव को कम करने की हर कोशिश करती है। बच्चों के मध्य प्रेम को बाँधे रखने के लिए झूठ भी बोलती है। पति से भी झूठ बोलती है। सबको खाना परोसती है। खिलाती है, पर स्वयं भूखी रहती है। मन में पीड़ा है पर किसी के भी सामने प्रकट नहीं करती ।

''रामचन्द्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा– मोहन कहाँ हैं ? बड़ी कड़ी धूप हो रही है। '' सिद्धेश्वरी को स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया है,? किंतु उसने झूठ–मूठ ही कहा– ''किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है, आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है और उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में लगी रहती है।

सुशीला टाकभौरे के '**संघर्ष**' कहानी संग्रह में दलित जातियों की नारियों के लिए जागृति(चेतना) संदेश निहित है, लेखिका ने दर्शाया है कि समाज दलित नारी को किस नजरिये से देखता है। नारी हमेशा यही सोचती है कि मेरी स्थिति में सुधार आयेगा। पुरुष वर्ग कभी न कभी तो उसे मनुष्य होने का दर्जा देगा। लेकिन ये उसका वहम था। अब नारी खुद अपने अधिकारों के प्रति जागृत हो चुकी है।

'संभव– असंभव' कहानी में लेखिका ने एक शूद्र लड़की और ब्राह्मण लड़के की विचारधारा का विवरण किया है। इस कहानी के माध्यम से समाज में शूद्रों की क्या स्थिति है?, का वर्णन किया है। समाज कहने को तो कहता है जातिभेद अब कहां रह गया सब में उठते – बैठते हैं, खाते – पीते हैं। लेकिन क्या वास्तव में समाज में सब बराबर है। 'संभव–असंभव ' कहानी में समाज में शूद्रों की स्थिति से अवगत कराया गया है। '' समय बदल रहा है फिर भी विषमतावादी भावनाओं की जड़े अभी बाकी हैं।'' समाज में दलित औरतों पर आदर्शों के नाम पर कई तरह के बन्धन लगाए जाते हैं। न चाहते हुए भी ये सारी जिन्दगी इसका बोझ उठाना पड़ता है।

वर्तमान दौर में औरतें इन बन्धनों को तोड़ने की कोशिश करने लगी है। 'संभव–असंभव' कहानी में दलित नारी इन बन्धनों से दबकर मरना चाहती है। लेकिन बाद में अहसास होने के कारण बन्धन तोड़ कर जीना चाहती है। ''आदर्शों की पोटली समाज के 'जगत' पर

रखकर शोषित पीड़ित एक दलित महिला कुंए में डूबकर मरना चाहती है।'' लेकिन महिला जागृति और समाज परिवर्तन के कारण अब वह हताश और निराश नहीं है। वह जानती है कि आज के युग में औरतें मरती नहीं हैं सामना करती है ं। ''दुनिया की रीति–नीति समाज की परम्पराएं बहुत बदल गये हैं। अब तक किस युग में जी रही थी? अगले जन्म की बातें बिल्कुल बकवास है। जो करना है, जो पाना है वह इसी जन्म में संभव है।'' अब वह समाज से लड़कर जिन्दा रहना चाहती है आदर्शों की पोटली को उतारकर फैंकना चाहती है।

हिन्दी कहानी साहित्य में नारी चेतना की अभिव्यक्ति में महिला कथाकार **मालती जोशी** का प्रयास सराहनीय है। उनकी कहानियाँ परिवार के इर्द – गिर्द घूमती रहती है, इसलिए नारी हृदय की आशा अकांक्षाओं, मानसिक ग्रन्थियों, एवं समस्याओं को विशेष रूप से चित्रित करती है। इनकी सभी कहानियों में प्रेम त्याग भावना की गहनता मध्यमवर्गीय द्वन्द्वात्मक सम्बन्ध स्त्री पुरुष प्रेम सम्बन्धी स्वाभिमानी नारी का चित्रण किया गया है।

मालती जोशी की **मध्यांतर** कहानी में पिताजी की आकस्मिक मृत्यु के बाद चाचाजी ने विमला की नौकरी लगवा दी। विमला के पति ने आरोप लगाया कि उसकी सारी हरकतें आम औरतों की तरह ही है, उसमें ईर्ष्या है, तब वह कहती है '' औरत कहलाने को कुछ बाकी और रहने दिया है तुमनें, सब कुछ तो निचोड़ लिया। बस पैसे कमाने की मशीन भर रह गई हूँ , मैं। मशीन हूँ न, रोने का हक थोड़े ही है मूझे । ''

मालती जोशी की **छीना हुआ सुख** कहानी में बताते है कि बचपन से लेकर अब तक जीवन बिताने वाली नारी अपनी बुरे माहौल के कारण चोरी करने के लिए विवश हो जाती है ।

मालती जोशी की कहानी **सन्नाटा ही सन्नाटा** में बुढ़ापे में माँ बाप को अपने बच्चों पर निर्भर रहना पड़ता है। आज के अर्थ प्रधान दौर में पैसा रिश्तों से भी अधिक मूल्यवान है। प्रायः घर की नारी को ही दुःख झेलना पड़ता है। परिंदे निर्मल वर्मा की चर्चित कहानियों में से एक है। यहाँ एक और जहाँ खोये हुए प्रेम की तड़प है, तो दूसरी ओर उस प्रेम से मुक्त होने की छटापटाहट भी।

परिंदे कहानी के केन्द्र में है लतिका, एक पर्वतीय शहर के आवासीय गर्ल्स कान्वेंट स्कूल की वार्डन। लतिका मेजर गिरीश नेगी से प्रेम करती थी। लेकिन, यह प्रेम अपने अंजाम तक नही पहुँच पाता है। मेजर गिरीश नेगी की मृत्यु हो जाती है। लतिका का प्रणय पुष्प असमय ही कुम्हला जाता हैं। तब से लतिका अपने पूर्व प्रेम की स्मृतियों को धरोहर बनाये जिये जा रही है, अपने वर्तमान से आँख चुराए। अतीत का हस्तक्षेप उसे वर्तमान को जीने नही दे रहा। अतीत का दबाव ही है, जिसक कारण लतिका अपने सहकर्मी हयूबर्ट के प्रेम से आँखे चुराती है। एक अन्य सहकर्मी डाक्टर मुखर्जी लतिका को समझाने की कोशिश करते है–

''लेट द डेड डाई। मरने वाले के संग खुद थोड़े ही मरा जाता है। किसी चीज को न जानना यदि गलत है, किसी चींज को न भूलना, जोंक की तरह उससे चिपटे रहना –यह भी तो गलत है।'' वह आगे बढ़ना चाहती है अतीत के बोझ से मुक्त होना चाहती है। आकाश में उड़ते परिंदो को देखकर सोचती है, '' हर साल सर्दी की छुट्टियों से पहले ये मैदानों की ओर उड़ते है, कुछ दिनों के लिए बीच के इस पहाड़ी स्टेशन पर बसेरा करते हैं बर्फ के दिनों की ,जब वे नीचे अजनबी , अनजाने देशों में उड़ जायेंगे।''

हम इतना ही कहना चाहते हैं कि नारी चेतना तो हो, किन्तु मर्यादा के साथ नारी को उसके अधिकारों के साथ–साथ दायित्वों का भी बोध होना आवश्यक है अन्यथा यह पुरुषप्रधान समाज नारी के चेतनशील किरदार को ज्यादा समय तक सहन नही करेगा या हो सकता है कि नारी चेतना के कारण महिलाओं में एक इगोकॉप्लेक्स आ सकता है। इसमें सूझबूझ और तालमेल की आवश्यकता है क्योंकि आज की नारी न तो महादेवी की कविता की नारी है और न ही शोभा डे के उपन्यासों की नारी है। उसे तो एक आदशर्त गृहणी के रूप में अपने आपको सिद्ध करना चाहिए तभी नारी चेतना शब्द सार्थक होता है। यह दृश्य पूरे भारत का है न कि किसी समाज विशेष का।

उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में समाज की समसामयिक समस्याओं की गहराई में उतरकर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उनकी नजर टटोलतें हुए नारी के जीवन से जुड़ी समस्याओं को उजागर किया है। उन्होंने नारी जीवन में होने वाले परिवर्तनो को बखूबी परखा

है। नारी की स्वतंत्र चेतना को मुखरित करते हुए '' छुट्टी का दिन और पूर्ति '' कहानियों में क्या वह अपने पैरों पर खड़े हो जाने और परिवार वालो से रिश्ता तोड़कर स्वतंत्र जीवन जीने से ही स्त्री सशक्त हो पाएगी ?

वस्तुत : दोनों कहानियों में स्त्री आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर भी जीवन के अकेलेपन से पीड़ित है, क्योंकि आंतरिक चेतना उन्हें अन्दर से इतनी पीड़ित कर देती है कि उनके सोचने एवं समझने की शक्ति क्षीण हो जाती है। सम्बधित कहानी की श्यामला मानसिक अव्यवस्था की शिकार है। घर से दूर विदेश में बसी श्यामला न परिवार वालो और न दाम्पत्य जीवन में बंध पाती है, और न ही उनसे दूर रहकर सुखी रह पाती है।

एक ओर विदाई की नमिता को लगता है उसका पति और परिवार उससे मोहब्ब्त नही करता तो वह विदेश चली जाती है , तो वह जाकर देखती है कि यहाँ के स्त्री पुरुष एक से ज्यादा सम्बध बनाते है, इनमें कहीं ठहराव ही नही है, तो नमिता को उसकी सांस्कृतिक चेतना झकझोर देती है और फिर से अपने पति के पास लौट आती है।

स्वीकृति कहानी के पति – पत्नी की अजीब कहानी जिसका परिणाम दोनों बेटों सत्य एवं जपा को भुगतना पड़ता है। पति अपनी नवविवाहिता पत्नी को सिर्फ पैसे कमाने के रूप में देखता है। लेकिन पत्नी, पति के साथ रहकर उसके साहचर्य का सुख उठाना चाहती है, परिणामस्वरुप दोनों में तनाव उत्पन्न हो जाता है। ये कहानी शारीरिक चेतना से सम्बधित है।

गाँधी जी ने कहा था कि महिलाओं के अधिकारों के विषय में समझौता नही कर सकता। शारीरिक बनावट एवं लिंगभेद, पुरुष और महिलाओं के कार्य में अन्तर को दर्शाता है, उनके स्तर के अन्तर को नही। महिला पुरुष की पूरक है, उनसे कम नहीं । नारी में चेतना के स्तर को देखते हुए ही महिला रचनाकारों ने स्त्री हितों एवं स्त्री मुक्ति को बल प्रदान किया है। नारी चेतना का चित्र जीवन तथा साहित्य दोनों में किया है। धर्म के नाम पर नारी कभी देवदासी तो कभी नगरवधू बनकर प्रताड़ित होती है , कभी गणिका तो कभी कुटनी बनकर नारीत्व को निंदनीय बनाया गया है। चेतना , नारी जीवन का स्वान्त सुखाय है तो दूसरी और जनहिताय। नारी चेतना आज स्पर्धा के युग में चुनौती है। नारी की घटती गरिमा और बढ़ते अत्याचार पर **महादेवी** ने लिखा है कि

''न जाने इन महलों की नींव पर कितनी मीराएँ सोई पड़ी है, उनमें यदि एक भी अंगारा दहक उठे तो आप समझिए महिला समाज आमूल रूप से परिवर्तन हो जाएगा। राख की ढ़ेर में यदि एक अंगारा ही बचा हो, तो वह भी सौ दियों को जलाने की क्षमता रखता है।''

प्राचीन समय से ही स्त्री को हाशिये पर धकेला जा रहा हैं। दुर्भाग्य की बात ये है कि भारत जैसे देश में जहां स्त्रियों को देवी का दर्जा दिया गया है। आज भी स्त्रियां पुरुष के बन्धनों में जकड़ी हुई हैं। नारी आर्थिक एवं शैक्षिक रूप से कितना भी सक्षम क्यों न हो, उन्हें किसी न किसी रूप में पुरुष मानसिकता का शिकार होना पड़ता है।

नारी के साथ होने वाले दिनोंदिन बढ़तें अत्याचारों ,बलात्कार, दहेज प्रथा , बालविवाह , विधवा प्रथा को मद्देनजर रखते हुए महिला की आन्तरिक चेतना को दुनिया ने झकझोर के रख दिया है। नारी को आदर्श नही , यथार्थ का नग्न चित्रण मानकर उसके वजूद के साथ खिलवाड़ किया गया है। उसकी आशाओं को पैरों तले रोंदा जा रहा है। आज भले ही महिला पढ़ी लिखी जरूर है, लेकिन उसके सपने आज भी उतने ही अधूरे है, जितने लोग शिक्षित है।

महिला सशक्तीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जहां महिलाएं अपने स्वयं के लिए समय तथा स्थान खोजती हैं। सशक्तीकरण ने महिलाओं को इस योग्य बनाया है कि महिलाएं अपनी पुरानी समस्याओं का नए तरीके से समाधान कर सके। अतः कहा जा सकता है कि सशक्तीकरण एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा महिलाओं को बराबरी एवं समानता का दर्जा मिले। इसके लिए यह आवश्यक है कि समाज की मानसिकता में परिवर्तन आए व पुरुष वर्ग आगे आकर इस कार्य में महिलाओं की मदद करें।

चेतना की सार्थक बहस कहीं न कहीं मनुष्यत्व की अवधारणा पर जाकर टिक जाती है। मनुष्यत्व की व्याख्या अनेक संदर्भों एवं प्रसंगों से की जा सकती है, लेकिन मनुष्यत्व का केन्द्रीय स्वर सर्वस्वीकृत है। वह अन्य जीव यानि पशु जगत से गाढ़े अर्थो से भिन्न है। भिन्नता चेतना के स्तर पर है। यही उसे प्राणी जगत में अलग स्थान प्रदान करती है।

समाज और परिवार यहाँ नारी को भी मनुष्य की श्रेणी में मानकर चल रही है। चेतना होने का अर्थ ही उत्तरदायी होना है। किसी बाहरी सत्ता के प्रति नहीं, बल्कि अपने–अपने अस्मिता के प्रति उत्तरदायी। अपनी चेतना के प्रति उत्तरदायी होना, समाज की विकास प्रक्रिया में अपनी भूमिका को रेखांकित करने का प्रयास है। यही आज की नारी की माँग भी है और नारीवादी आंदोलनों का आधार भी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- प्रियंवदा उषा : सम्बध सम्पूर्ण कहानियाँ , राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली संस्करण 2006, पृ.स.326
- प्रियंवदा उषा : एक ओर विदाई, वनवास पेंगुइन बुक्स इण्डिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली पहला
- संस्करण 2009 पृ.स. 127
- उषा प्रियंवदा का कथा संसार , दिनकर दाधीच पृ.स. 73,74,75
- हिन्दी कहानियों में देह व्यापार ममता खांड़ल
- साठोत्तरी हिन्दी कहानियों के संघर्ष चेतना (सरबजीत सिंह)
- टूटता वहम् कहानी संग्रह
- औरत एक समाजशास्त्रात्रीय अध्ययन – ज्ञानेन्द्र सर
- यशपाल की परदा कहानी
- अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ , भाग 50, 125
- प्रेमचन्द की प्रमुख कहानियाँ
- प्रसाद जयशंकर की कहानियाँ
- संघर्ष (कहानी– संभव–असंभव) पृ.सं. 115
- वहीं से पृ.सं. 129
- संघर्ष (कहानी– संभव–असंभव) पृ.सं. 129
- सुशीला टाकभौरे के साहित्य में दलित महिला चेतना , अनुभूति के घेरे कथा संग्रह . 111–128
- जोशी मालती : सम्बन्ध सम्पूर्ण कहानियाँ

**** Corresponding Author***

श्रीमती रेखा कुमारी

सहायक प्रोफेसर (हिन्दी)

हितकारी सहकारी महिला शिक्षा महाविद्यालय आरामपुरा कोटा (राज़)

Email- rk2847108@gmail.com, Mob.- 6376625611